सुतरां, यह जानना आवश्यक है कि 'बुद्धियोग' का तात्पर्य कृष्णभावना अर्थात् भक्ति के पूर्ण आह्लाद और प्रबोध से युक्त होकर कर्म करना है। जो केवल श्रीभगवान् की प्रीति के लिए कर्म करता है, वह पुरुष कठिन-से-कठिन कार्य करते हुए भी 'बुद्धियोग' से युक्त रहता है; इसके आश्रय में नित्य-निरन्तर चिन्मय रसानन्द का आस्वादन करता है। ऐसी भगवत्परायणता के फलस्वरूप भगवत्कृपा से उसे सम्पूर्ण चिन्मय गुणों की अपने-आप उपलब्धि हो जाती है। इस प्रकार उसे ज्ञान के लिए अनावश्यक उद्यम नहीं करना पड़ता; भक्ति के प्रताप से ही वह पूर्ण मुक्त हो जाता है। कृष्णभावनाभावित कर्म में तथा सकाम कर्म में, विशेषतः परिवार के सुख अथवा प्राकृत सुख की प्राप्ति रूपी इन्द्रियतृप्ति के लिए कर्म करने में गम्भीर भेद है। 'बुद्धियोग' हमारे कर्मों को दिव्यता प्रदान करता है।

12.2

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।।४०।।

न=नहीं; **इह**=इस बुद्धियोग में; **अभिक्रम**=आरम्भ का; **नाशः**=विनाश; **अस्ति**=होता; **प्रत्यवायः**=ह्रास; **न**=नहीं; **विद्यते**=होता; **स्वल्पम्**=थोड़ा; **अपि**=भी (साधन); **अस्य**=इस; **धर्मस्य**=धर्म का; **त्रायते**=उद्धार कर देता है; **महतः**=महान्; **भयात्**=भय से।

अनुवाद

कृष्णभावना के लिये जो कुछ भी साधन किया जाता है, उसका न तो कभी नाश होता और न ह्रास ही होता है। इस पथ में की गई अल्प प्रगति भी महान् भय से रक्षा कर लेती है।।४०।।

तात्पर्य

अपनी इन्द्रियों को तृप्त करने की इच्छा को त्यागकर कृष्णभावनाभावित कर्म करना, अर्थात् श्रीकृष्ण की प्रसन्नता के लिये कर्म करना सर्वश्रेष्ठ दिव्य क्रिया है। यदि ऐसे कर्म को छोटे से रूप में ही प्रारम्भ किया जाय, तो भी उसमें न तो कोई बाधा आती है और न ही कभी उसका नाश होता है। यह नियम है कि किसी प्राकृत क्रिया को प्रारम्भ करके पूर्ण करना आवश्यक है, अन्यथा सम्पूर्ण प्रयास विफल हो जाता है। परन्तु कृष्णभावनाभावित कर्म की यह विशेषता है कि अपूर्ण रह जाने पर भी उसका चिरस्थायी फल होता है। अतः कृष्णभावनाभावित कर्म करने वाले की किसी भी दशा में हानि नहीं होती। यदि कृष्णभावनाभावित कर्म केवल एक प्रतिशत ही पूर्ण हुआ हो, तो भी उसका सनातन फल होगा, जिससे पहले किये हुए की आवृत्ति किये बिना, भविष्य में उत्तरोत्तर आगे उन्नति की जा सकती है। इसके विपरीत, प्राकृत कर्म जब तक शत-प्रतिशत पूर्ण नहीं हो जाता, तब तक उससे कुछ लाभ नहीं होता। अजामिल ने कृष्णभावना विषयक साधन का अभ्यास एक अंश में ही किया था, परन्तु मृत्यु समय भगवत्कृपा से उसे पूर्णफल की प्राप्ति हुई। इस सन्दर्भ में श्रीमद्भागवत में एक सुन्दर श्लोक है: